16/3

सदृशं चेष्टते स्वस्याः प्रकृतेर्ज्ञानवानपि।
प्रकृतिं यान्ति भूतानि निग्रहः किं करिष्यति।।३३।।

सदृशम्=अनुसार; **चेष्टते**=चेष्टा करता है; **स्वस्याः**=अपनी; **प्रकृतेः**=गुणों के; **ज्ञानवान्**=ज्ञानी; **अपि**=भी; **प्रकृतिम्**=प्रकृति को; **यान्ति**=प्राप्त होते हैं; **भूतानि**=सब प्राणी; **निग्रहः**=बलात् निरोध; **किम्**=क्या; **करिष्यति**=कर सकता है।

अनुवाद

ज्ञानी भी अपनी प्रकृति के अनुसार कर्म करता है क्योंकि सब प्राणी अपनी प्रकृति को ही प्राप्त होते हैं। फिर इसमें बलपूर्वक निग्रह क्या करेगा?।।३३।।

तात्पर्य

कृष्णभावनामृत की शुद्ध सत्त्वमयी भावभूमि पर आरूढ़ हुए बिना त्रिगुणमयी माया से मुक्ति नहीं हो सकती, जैसा स्वयं श्रीभगवान् ने (७.१४) कहा है। अतएव लौकिक स्तर पर स्थित बड़े से बड़े विद्वान् के लिए भी देह और आत्मा में भेद के केवल पुस्तकीय ज्ञान के आधार पर मुक्त हो जाना असम्भव है। ऐसे अनेक कपट-योगी हैं, जो बाह्य रूप से इस विज्ञान में उन्नत होने का दम्भ करते हैं, परन्तु हृदय में पूर्णरूप से उन प्राकृतिक गुणों के आधीन रहते हैं जिनका वे उल्लंघन नहीं कर सकते। पुस्तकीय ज्ञान का पारगामी उच्च विद्वान् भी चिरकाल से चले आ रहे मायासंग के कारण मुक्त नहीं हो पाता, जबकि कृष्णभावना उस मनुष्य के लिए भी बन्धनमुक्ति में सहायक सिद्ध होती है, जो स्वधर्म-पालन में व्यस्त हो। अतः पूर्ण रूप से कृष्णभावनाभावित हुए बिना अकस्मात् स्वधर्म को त्याग कर कपट-योगी नहीं बनना चाहिए। अधिक उत्तम यह है कि यथास्थिति बने रहकर सद्गुरु की शिक्षा के आश्रय में कृष्णभावनाभावित होने का प्रयत्न करता रहे। इस विधि द्वारा मायाबन्धन से मोक्ष सुलभ हो सकता है।

17/3

इन्द्रियस्येन्द्रियस्यार्थे रागद्वेषौ व्यवस्थितौ।
तयोर्न वशमागच्छेत्तौ ह्यस्य परिपन्थिनौ।।३४।।

इन्द्रियस्य=इन्द्रियों के; **इन्द्रियस्य अर्थे**=विषयों में; **राग**=आसक्ति; **द्वेषौ**=द्वेष; **व्यवस्थितौ**=स्थित हैं; **तयोः**=उनके; **न**=नहीं; **वशम्**=नियन्त्रण में; **आगच्छेत्**=आए; **तौ**=वे; **हि**=निःसन्देह; **अस्य**=इसके; **परिपन्थिनौ**=व्यवधान हैं।

अनुवाद

बद्ध जीवों को इन्द्रियविषयों में राग-द्वेष का अनुभव होता है; परन्तु इन्द्रियों तथा इन्द्रियविषयों के वश में नहीं होना चाहिए, क्योंकि वे दोनों स्वरूप-साक्षात्कार के मार्ग में विघ्नकारी हैं।।३४।।

तात्पर्य

कृष्णभावनाभावित महानुभाव स्वभावतः प्राकृत इन्द्रियतृप्ति के प्रति वितृष्ण रहते हैं। परन्तु जो इस उदात्त भावना से युक्त नहीं हैं, उन्हें शास्त्रीय विधि-विधान का